UP Board Notes Class 12 Sahityik Hindi गद्य Chapter 1 राष्ट्र का स्वरूप

Rashtra Ka Swaroop राष्ट्र का स्वरूप – जीवन/साहित्यिक परिचय

जीवन-परिचय एवं साहित्यिक उपलब्धियाँ

भारतीय संस्कृति और पुरातत्त्व के विद्वान वासुदेवशरण अग्रवाल का जन्म वर्ष 1904 में उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के खेड़ा' नामक ग्राम में हुआ था। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातक करने के बाद एम.ए. पी.एच.डी. तथा डी.लिट की उपाधि इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से प्राप्त की। इन्होंने पालि, संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं एवं उनके साहित्य का गहन अध्ययन किया। ये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भारती महाविद्यालय में 'पुरातत्त्व एवं प्राचीन इतिहास विभाग के अध्यक्ष रहे। वासुदेवशरण अग्रवाल दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय के भी अध्यक्ष रहे। हिन्दी की इस महान् विभूति का वर्ष 1967 में स्वर्गवास हो गया।

साहित्यिक सेवाएँ

इन्होंने कई ग्रन्थों का सम्पादन व पाठ शोधन भी किया जायसी के 'पद्मावत' की संजीवनी व्याख्या और बाणभट्ट के 'हर्षचरित' का सांस्कृतिक अध्ययन प्रस्तुत करके इन्होंने हिन्दी साहित्य को गौरवान्वित किया। इन्होंने प्राचीन महापुरुषों-श्रीकृष्ण, वाल्मीकि, मनु आदि का आधुनिक दृष्टिकोण से बुद्धिसंगत चरित्र-चित्रण प्रस्तुत किया।

कृतियाँ

डॉ. अग्रवाल ने निबन्ध-रचना, शोध और सम्पादन के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं-

1. निबन्ध संग्रह पृथिवी पुत्र, कल्पलता, कला और संस्कृति, कल्पवृक्ष, भारत की एकता, माता भूमि, वाग्धारा आदि।
2. शोध पाणिनिकालीन भारत।
3. म्पादन जायसीकृत पद्मावत की संजीवनी व्याख्या, बाणभट्ट के हर्षचरित का सांस्कृतिक अध्ययन। इसके अतिरिक्त इन्होंने संस्कृत, पालि और प्राकृत के अनेक ग्रन्थों का भी सम्पादन किया।

भाषा-शैली।

डॉ. अग्रवाल की भाषा-शैली उत्कृष्ट एवं पाण्डित्यपूर्ण है। इनकी भाषा शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली है। इन्होंने अपनी भाषा में अनेक प्रकार के देशज शब्दों का प्रयोग किया है, जिसके कारण इनकी भाषा सरल, सुबोध एवं व्यावहारिक लगती है। इन्होंने प्रायः उर्दू, अंग्रेजी आदि की शब्दावली, मुहावरों, लोकोक्तियों का प्रयोग नहीं किया है। इनकी भाषा विषय के अनुकूल है। संस्कृतनिष्ठ होने के कारण भाषा में कहीं अवरोध आ गया है, किन्तु इससे भाव प्रवाह में कोई कमी नहीं आई है। अग्रवाल जी की शैली में उनके व्यक्तित्व तथा विद्वता की सहज अभिव्यक्ति हुई है, इसलिए इनकी शैली विचार प्रधान है। इन्होंने गवेषणात्मक, व्याख्यात्मक तथा उद्धरण शैलियों का प्रयोग भी किया है।

हिन्दी साहित्य में स्थान

पुरातत्त्व विशेषज्ञ डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल हिन्दी साहित्य में पाण्डित्यपूर्ण एवं सुललित निबन्धकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। पुरातत्वे व अनुसन्धान के क्षेत्र में, उनकी समता कर पाना अत्यन्त कठिन है। उन्हें एक विद्वान् टीकाकार

एवं साहित्यिक ग्रन्थों के कुशल सम्पादक के रूप में भी जाना जाता है। अपनी विवेचना पद्धति की मौलिकता एवं विचारशीलता के कारण वे सदैव स्मरणीय रहेंगे।

राष्ट्र का स्वरूप राष्ट्र का स्वरूप – पाठ का सार

परीक्षा में 'पाठ का सार' से सम्बन्धित कोई प्रश्न नहीं पूछा जाता है। यह केवल विद्यार्थियों को पाठ समझाने के उद्देश्य से दिया गया है।

प्रस्तुत निबन्ध डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के निबन्ध संग्रह 'पृथिवीपुत्र' से लिया गया है। इसमें लेखक ने राष्ट्र के स्वरूप को तीन तत्वों के सम्मिश्रण से निर्मित माना है-पृथ्वी (भूमि), जन (मनुष्य) और संस्कृति।

पृथ्वी : हमारी धरती माता

लेखक का मानना है कि यह पृथ्वी, भूमि वास्तव में हमारे लिए माँ है, क्योंकि इसके द्वारा दिए गए अन्न-जल से ही हमारा भरण-पोषण होता है। इसी से हमारा जीवन अर्थात् अस्तित्व बना हुआ है। धरती माता की कोख में जो अमूल्य निधियाँ भरी पड़ी हैं, उनसे हमारा आर्थिक विकास सम्भव हुआ है और आगे भी होगा। पृथ्वी एवं आकाश के अन्तराल में जो सामग्री भरी हुई है, पृथ्वी के चारों ओर फैले गम्भीर सागर में जो जलघर एवं रत्नों की राशियाँ हैं, उन सबका हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव । अतः हमें इन सबके प्रति आत्मीय चेतना रखने की आवश्यकता है। इससे हमारी राष्ट्रीयता की भावना को विकसित होने में सहायता मिलती है।

राष्ट्र का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं सजीव अंग : जन (मनुष्य)

लेखक का मानना है कि पृथ्वी अर्थात् भूमि तब तक हमारे लिए महत्वपूर्ण नहीं हो सकती, जब तक इस भूमि पर निवास करने वाले जन को साथ में जोड़कर न देखा जाए। पृथ्वी माता है और इस पर रहने वाले जन अर्थात् मनुष्य इसकी सन्तान। जनों का विस्तार व्यापक है और इनकी विशेषताएँ भी विविध हैं। वस्तुतः जन का महत्त्व सर्वाधिक है। राष्ट्र जन से ही निर्मित होता है। जन के बिना राष्ट्र की कल्पना असम्भव है। ये जन अनेक उतार-चढ़ाव से जूझते हुए, कठिनाइयों का सामना करते हुए आगे बढ़ने के लिए कृत संकल्प रहते हैं। इन सबके प्रति आत्मीयता की भावना हमारे अन्दर राष्ट्रीयता की भावना को सुदृढ़ करती है।

संस्कृति : जन (मनुष्य) के जीवन की श्वास-प्रश्वास

लेखक का मानना है कि यह संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है और सरकृति के विकास एवं अभ्युदय के द्वारा ही राष्ट्र की वृद्धि सम्भव है। अनेक संस्कृतियों के रहने के बावजूद सभी संस्कृतियों का मूल आधार पारस्परिक सहिष्णुता एवं समन्वय की भावना है। यही हमारे बीच पारस्परिक प्रेम एवं भाई-चारे का स्रोत है और इसी से राष्ट्रीयता की भावना को बल मिलता है।

लेखक का मानना है कि सहृदय व्यक्ति प्रत्येक संस्कृति के आनन्द पक्ष को स्वीकार करता है और उससे आनन्दित होता है। लेखक का मानना है कि अपने पूर्वजों से प्राप्त परम्पराओं, रीति-रिवाजों को बोझ न समझकर उन्हें सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। उन्हें भविष्य की उन्नति का आधार बनाकर ही राष्ट्र का स्वाभाविक विकास सम्भव है।

https://www.evidyarthi.in/